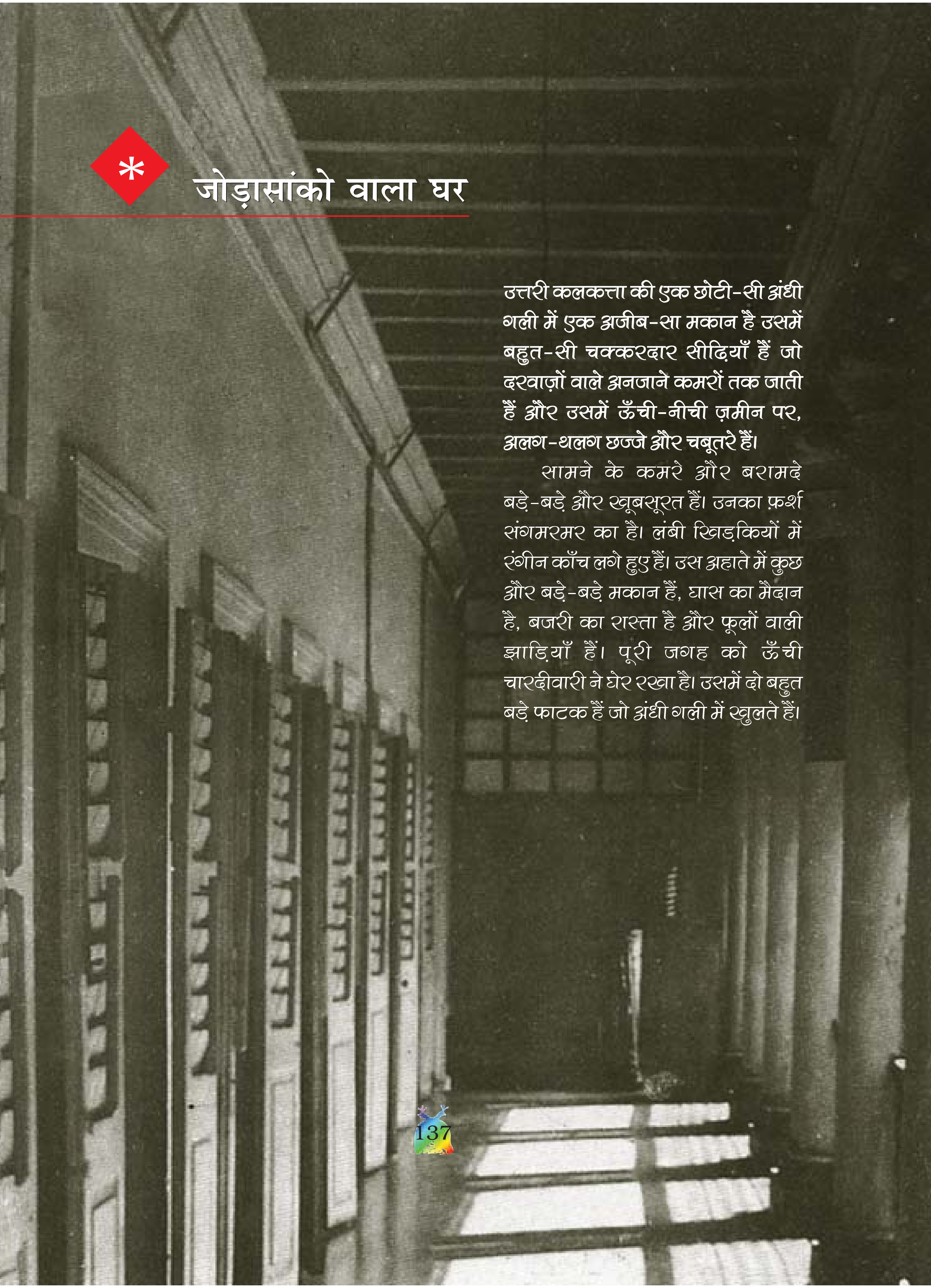

जोड़ासांको वाला घर

उत्तरी कलकत्ता की एक छोटी-सी अंधी गली में एक अजीब-सा मकान है उसमें बहुत-सी चक्करदार सीढ़ियाँ हैं जो दरवाज़ों वाले अनजाने कमरों तक जाती हैं और उसमें ऊँची-नीची ज़मीन पर, अलग-थलग छज्जे और चबूतरे हैं।

सामने के कमरे और बरामदे बड़े-बड़े और खूबसूरत हैं। उनका फ़र्श संगमरमर का है। लंबी खिड़कियों में रंगीन काँच लगे हुए हैं। उस अहाते में कुछ और बड़े-बड़े मकान हैं, घास का मैदान है, बजरी का रास्ता है और फूलों वाली झाड़ियाँ हैं। पूरी जगह को ऊँची चारदीवारी ने घेर रखा है। उसमें दो बहुत बड़े फाटक हैं जो अंधी गली में खुलते हैं।

कलकत्ता के लोग इसे टैगोर भवन कहते हैं। अब से लगभग दो सौ बरस पहले, ईस्ट इंडिया कंपनी के ज़माने में, यह मकान बना था।

वह छोटी-सी गली और उसका नन्हा-सा शिव मंदिर भी पुराना है। उस सारी जगह पर पुरानेपन की छाप आज भी मौजूद है। संकरी गली जहाँ बड़ी सड़क से जा मिलती थी, उसके कोने पर एक छोटा अहाता दिखाई पड़ता था। उसमें पीतल के बने चिड़ियों के अड्डों की एक कतार थी और हर अड्डे पर भड़कीले रंगों वाला एक-एक काकातुआ था। उनकी कड़वी तीखी चीख-चिल्लाहट की आवाज़ चारों ओर गूँजती रहती थी। अड़ोस-पड़ोस की सारी जगह कुछ अजीब और गैरमामूली ढंग की थी।

टैगोर परिवार तभी से इसमें रहता था। बीच-बीच में वे लोग इसमें बढ़ोतरी भी करते जाते थे। आज से एक सौ बरस पहले, बरसाती मौसम के तीसरे पहर, एक खूबसूरत लड़का खिड़की से झुककर बेचैनी के साथ पानी से भरी गली की ओर देख रहा था। उसने मामूली सूती कपड़े और सस्ते स्लीपरों की जोड़ी पहन रखी थी। उसके केश कुछ ज़्यादा ही लंबे थे। वह ऐसा लग रहा था, जैसे कितने ही दिनों से उसकी हज़ामत न हुई हो। कुछ लोगों का कहना था कि वह लड़की जैसा दिखता था। एक बार उसके स्कूल के एक साथी ने यह अफ़वाह फैला दी कि वह सचमुच एक लड़की ही है जो लड़कों जैसे कपड़े पहनती है। इस बात को साबित करने के लिए उसके साथियों ने उसे चाय पीने के लिए बुलाया। उन लोगों ने उसे एक ऊँचे बेंच पर से कूदने को मज़बूर किया, क्योंकि उनका खयाल था कि लड़कियाँ नीचे उतरते समय पहले

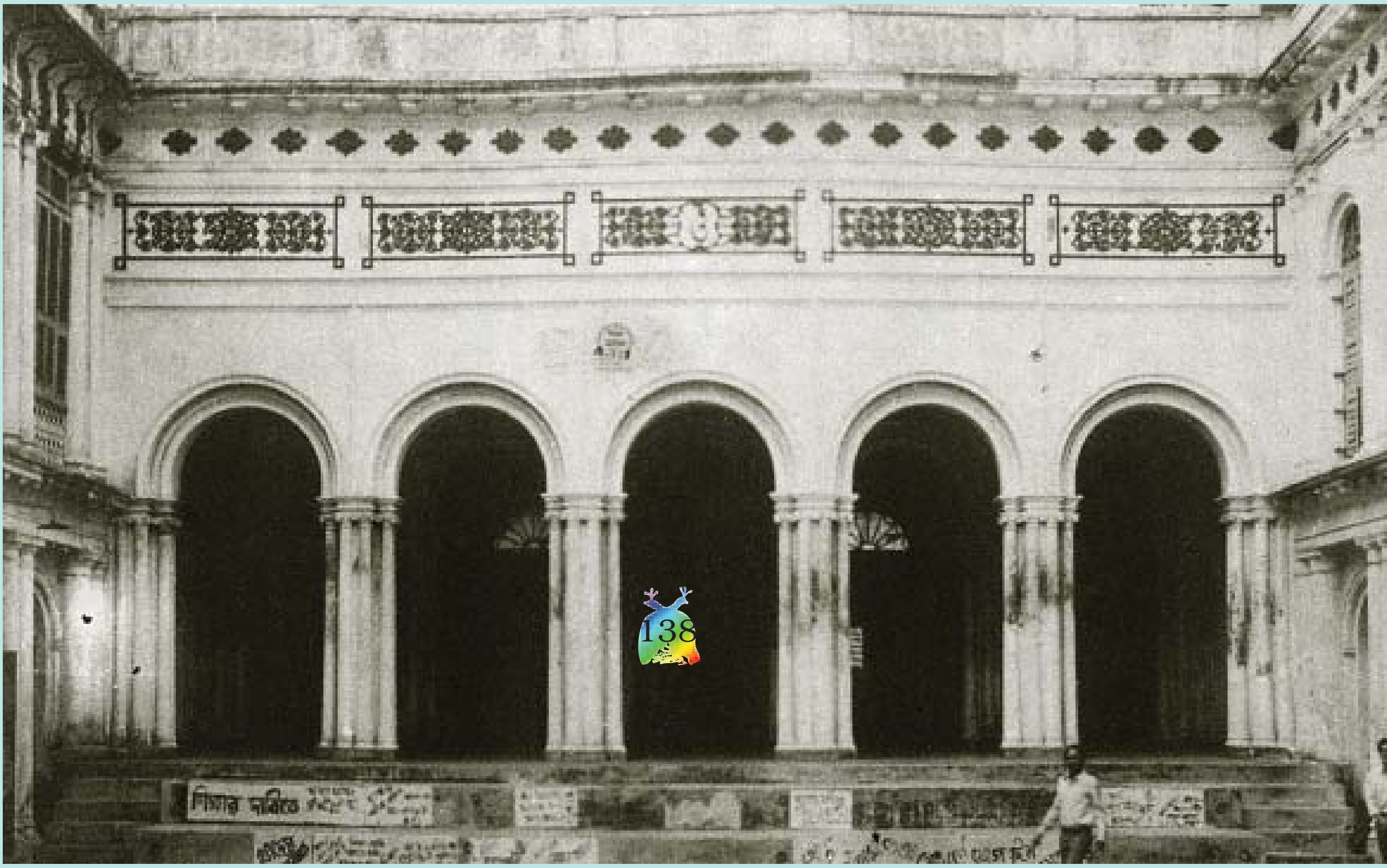

बायाँ पैर उठाती हैं। वह कूद तो गया, लेकिन बहुत दिनों बाद तक उसे उस चाय-पार्टी के बारे में कोई संदेह नहीं हुआ। लड़के का नाम रबींद्रनाथ या संक्षेप में रबि था।

बरसाती मौसम के एक तीसरे पहर, आठ साल का रबि अपने मास्टर के आने की राह देख रहा था। वह मन-ही-मन चाह रहा था कि पानी भरी सड़कों के कारण मास्टर जी न आ पाएँ। लेकिन अफ़सोस, वक्त की पूरी पाबंदी के साथ, उसकी तमाम उम्मीदों को मिट्टी में मिलाता हुआ, सड़क के मोड़ पर पैबंद लगा एक काला छाता दिख पड़ा। अब अपनी किताबें लेकर नीचे के एक मद्धिम रोशनी वाले कमरे में जा बैठने के सिवा और कोई उपाय न था। उसकी आँखें नींद से बोझिल हो रही थीं, लेकिन रात में देर तक पढ़ना था-अँग्रेज़ी, गणित, विज्ञान, इतिहास और भूगोल। यहाँ तक कि आदमी के शरीर की हड्डियों की जानकारी पाने के लिए उसे एक नर-कंकाल को भी हाथ लगाना पड़ता था। यह अजीब-सी बात थी कि मास्टर जी के जाते ही उसकी आँखों की नींद गायब हो गई।

उस ज़माने में बिजली की बत्तियाँ नहीं थीं, यहाँ तक कि गैस की रोशनी का भी ज़्यादा चलन नहीं था। पानी के नल का भी कोई पता नहीं था। नीचे के एक अँधेरे कमरे में, जहाँ सूरज की रोशनी नहीं पहुँचती थी, मिट्टी के घड़ों में भरकर साल भर के लिए पीने का पानी इकट्ठा किया जाता था। नन्हा रबि जब कभी उस कमरे में झाँकता, उसका बदन सिहर उठता था। लेकिन घरवालों को नदी का भरपूर पानी मिल जाता था, क्योंकि सीधे गंगा से नहर खोदकर पिछवाड़े के बगीचे और अहाते में लाई गई थी। जब बाढ़ का पानी चढ़ आता तो रबि बड़े अचरज और बड़ी खुशी से कलकल-छलछल करती नदी के पानी को देखा करता था, जो सूरज की किरणों से रोशनी लेकर चमक-चमक उठता था। कभी-कभी छोटी मछलियाँ धारा के साथ बह आती थीं और उस छोटे-से तालाब में फिसल जाती थीं जिसमें चाचा ने सुनहरी मछलियाँ पाल रखी थीं। छोटी मछलियों के साथ रबि का दिल भी उछल पड़ता था।

सचमुच वह अचरज भरा मकान था लोगों की भीड़ से भरा हुआ। पिता, माता, चाचा, चाचियाँ, भाई, बहनें, चचेरे भाई, भाभियाँ, दोस्त, दोस्तों के दोस्त, कलाकार, गाने-बजानेवाले, लेखक, सभी थे वहाँ। अब यह घर शांति निकेतन का एक हिस्सा है। रबि जब बड़ा हुआ तो उसने अपनी ज़िंदगी का ज़्यादातर हिस्सा शांति निकेतन में बिताया। शांति निकेतन में उसने अपना निज का स्कूल बनवाया। यह जगत प्रसिद्ध शांति निकेतन विश्वविद्यालय के एक अंग के रूप में आज भी वहाँ मौजूद है।

लीला मजूमदार